पांचवां परिच्छेद

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत् ।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनं ।।

साहित्य जीवन को ऊंचे धरातल पर ले जा कर उस के विश्वजनीन शाश्वत सत्यों की व्यंजना सुन्दर तथा मंगलमय परिधान में करता है । संकुचित सीमाओं की परिधि के लिए वहां स्थान नहीं रहता । उसका विस्तार अनंत है । उस की उज्जवल कांति इस तरह फैल जाती है कि उस का आदि और अंत का ज्ञान नहीं होता । गंभीर चिन्तन तथा दर्शन से पुष्ट होकर व्यापक क्षितिज पर जीवन की गहराइयों का बोध कराना साहित्यिक सृजन का मुख्य उद्देश्य की पूर्ति करने की सफल चेष्टा करता है ।

जीवन की गतिशीलता हर एक कृति में विद्यमान रहती है पर एक ही रूप से उस की व्यंजना नहीं होती । प्रत्येक साहित्यकार के सम्मुख जीवन फैला हुआ है और प्रत्येक साहित्यकार उन्हीं उपकरणों से अपनी कृतियों की रचना करता है । ~~पर-साहित्यकार-उन्हीं-उपकरणों-से-अपनी-कृतियों-की रचना-करता-है-।~~ पर साहित्यिक कृतियों में विभिन्नता तथा नवीनता की मात्रा भी कम नहीं रहती । इसका कारण यह है कि प्रत्येक साहित्यकार एक नये कोण से जीवन का अवलोकन करता है । उस के दृष्टिकोण की मौलिकता के अनुसार उस की कृतियों में उसका एक विशिष्ट जीवन दर्शन की प्रतिष्ठा होती है । अपने अनुभव तथा संस्कारों के आधार पर साहित्यकार की अपनी धारणाएं बन जाती हैं । प्राचीन साहित्यकारों तथा महान चिंतक के प्रभाव भी उस के दृष्टिकोण को बनाने में सहायक होते हैं । उन प्रभावों से उत्पन्न दर्शन भी एक विशिष्ट मौलिकता से युक्त होकर लेखक के व्यक्तित्व का परिचायक होता है । कुछ ऐसे साहित्यकार भी होते हैं जिन की विचार धारा युगानुकूल परिवर्तित होती जाती है । उन पर अनेक चिंतन सरणियों का प्रभाव इस तरह पड़ता है कि उन की कोई निश्चित धारणा नहीं बन पाती । उन की कृतियों में कभी एक तरह का चिंतन मिलता है तो कभी अन्य चिंतन की प्रबलता दर्शन देती है । ऐसे साहित्यकार भी हैं जिन का व्यक्तित्व हिमालय की भांति महान है निश्चल है और है उन्नत । उन की विचार स्त्रवंति का प्रवाह गंगा प्रवाह की भांति निरंतर गतिशील होकर एकोन्मुखता के साथ जीवन के गंभीर तथा विशाल सागर में विलीन हो जाता है । उनकी कृतियों में एक ही स्वर आद्योपान्त सुनाई पड़ता है । हां, स्वर के आरोह- अवरोह की मात्रा में विभिन्नता रहती है जिस के कारण माधुर्य तथा सौन्दर्य की वृद्धि होती है ।

डा. रामकुमार वर्मा दूसरे वर्ग के साहित्यकारों के अंतर्गत आते हैं। उन की रचनाओं में उनका व्यक्तित्व फैला हुआ दर्शन देता है। उन की कृतियों में आद्योपान्त एक ही तरह का दर्शन मिलता है। उन्होंने जीवन मेरी दृष्टि में " नामक लेख में अपने एकांकी नाटक के शेखर के वक्तव्य का उद्धरण देकर अपने दृष्टिकोण को स्पष्ट किया है। डा. शेखर सौम्य भाव से कहता है --- हंसने से तुझे कौन रोकता है ? मैं यही सिद्ध करना चाहता हूं कि यह जीवन सदैव हराभरा है। सुन्दर है, मधुर है, जैसे चांद की हंसी, फूल की सुगंधि, पक्षी का कलरव। नदी की लहर जो हमेशा आगे बढ़ना जानती है। फैलती है, तो जैसे पलक खुल रही है और वह पल भर में संसार का तट छू लेती है। " जीवन की इस परिभाषा में उनका दर्शन संपूर्णतः व्यंजित हो रहा है। जीवन में सुख है, सुगंधि है, रूप है और है ऐसी प्रगतिशीलता जो अपने से निकलकर सारे संसार को छू लेती है। यही विश्वजनीनता है। समस्त मानवता को अपने में समेट कर एक संपूर्ण चित्र की रूप कल्पना करना ही साहित्यकार का ध्येय रहना चाहिए। जीवन के प्रति इस व्यापक दृष्टिकोण के रूप पर साहित्यकार की विचार धारा एकोन्मुख होकर ही प्रवाहित होती है। किसी विशेष वाद के प्रभाव के चुंगल में फंस नहीं जाती। डा. वर्मा की कृतियों में किसी वाद की प्रतिष्ठा इसीलिए नहीं हुई है। व्यक्ति और समाज दोनों की समान चेतना के पक्षपाती है, वे किसी एक अंग की उपेक्षा कर के दूसरे को परिपुष्ट एवं स्वस्थ बनाने की भूल नहीं करते। व्यक्ति और समाज के समविकास को उन के जीवन दर्शन का ध्येय है। जीवन को अवलोकन ऊंचे धरातल पर स्थित रह कर करते हैं और उस ऊंचाई तक जीवन को उठाने की प्रेरणा देने का सशक्त प्रयत्न उन की रचनाओं में दिखाई पड़ता है।

डा. वर्मा भारतीय संस्कृति के अनन्य भक्त हैं। प्राचीन भारतीय ऋषियों चिंतकों तथा ज्ञानियों ने जीवन का अवलोकन कर उस की परिभाषा प्रस्तुत करते हुए उस को मंगलमय बनाने के जो विधान बताये थे उन विधानों के प्रति उन की बड़ी आस्था है। उन्हीं स्त्रोतों से प्रवाहित विचार तथा भाव धाराओं के संगम से डा. वर्मा का दृष्टिकोण निर्मित हुआ है।

वे जीवन को हरा भरा उपवन समझते हैं। इसी कारण से वे कभी विराग की दृष्टि से जीवन को नहीं देखते। जीवन के प्रति उन का अचंचल अनुराग है। वे कहते हैं " जीवन एक पवित्र विभूति है। सौन्दर्य और सुख का केन्द्र है। इस का सौन्दर्य ऐसा है जो कभी पुराना न पड़ता हो, जिस में कभी बुढ़ापा न आता हो।

वह ऐसे सुख का केन्द्र है जो विविध विपत्ति के बादल से भी धुंधला न होने पावे। जीवन के सौन्दर्य से तात्पर्य केवल उस के बाह्य रूप के आवरण से नहीं अपितु उस के आंतरिक आत्मगत सौन्दर्य से भी है। आन्तरिक सौन्दर्य रहित बाह्य रूप की कोई महत्ता नहीं रहती। डा. वर्मा ने आत्मगत सौन्दर्य की शान्ति के सामने बाह्य रूप की मादकता की पराजय का अंकन १८ जुलाई की शाम नामक एकांकी नाटक में किया है। इस नाटक में दो पात्रों का तुलनात्मक चरित्र प्रस्तुत किया गया है। उषा में इन्द्रियों के रूपका आकर्षण है और राजे में आत्मा के रूप का। इन्द्रियों के रूप का आकर्षण स्वतः मादक और अधिक बलवती होता है पर आत्मा के रूप के आकर्षण में स्थिर शान्ति निवास करती है। उषा एलफ्रेड पार्क के लान पर बैठी है। अशोक, उस का प्रेमी, उस की केश राशि के खुले हुए छोर में कोमल कलियों को कैद कर रहा है। सुन्दरता से सुन्दरता को बांध रहा है, "लेडी आफ दि नाइट" की सुगंधि जैसे उस के सामने अपने को हवा में खो देना चाहती है। यूकिलपटिस पेड़ के पीछे से चान्द उन्हें देखता है और उस वक्त कोयल कहती है "कुऊ"। दूसरी ओर राजे साधारण वस्त्रों में आती है और आते ही पहली बात वह कहती है कि उस की बहन मृत्यु-शैय्या पर है और वह सहायता चाहती है। उषा के चरित्र में रूप की वासना हिमालय पर्वत पर चढ़कर पुकारती है कि मैं हूं उषा जिस में यौवन की लालिमा है। राजे के चरित्र में करुणा का सौन्दर्य है जो रोम-रोम में एक सिहरन पैदा कर आत्मा में बस जाता है और मनुष्यत्व कहता है --- मैं तुम्हारी रक्षा करूंगा। परिणाम यही होता है। राजे की करुणा उषा के रूप की रानी बन जाती है। इन दोनों के दृष्टिकोण के अंतर के कारण ही जहां राजे उषा के पति प्रमोद के हृदयगत सौन्दर्य तथा निर्मल पवित्रता को पहचानने में सफल हुई है वहां पत्नी होकर भी उषा पति को जानने में असमर्थ हुई और अपने जीवन से असंतुष्ट रही है। लेकिन अंत में राजे के ही कारण उषा में परिवर्तन होता है। इस तरह इस नाटक में आत्मा के सौन्दर्य की महानता की विजय दिखलाई गई है। डा. वर्मा ने अपनी रचनाओं में मानव की आत्मा के सच्चे स्वरूप का अंकन विविध दिशा कोणों से परख कर किया है। वे रूप के आकर्षण को या बाह्य सौन्दर्य को कम स्थान नहीं देते पर उस के सम्मुख आत्मा को विस्मृत कर देना अनुपयुक्त ही नहीं, हानिकारक भी समझते हैं। उन के ही शब्दों में ऊपरी रूप तो केवल एक वार्निश या पालिश है।

क्या शरीर ? शुष्क धूल का थोड़ा सा छवि - जाल ।

१५००७८५

उस छवि में ही छिपा हुआ है वह भीषण कंकाल ।।।

बाह्य रूप और विपत्तियों के संघर्ष से बचकर जीवन की गति जब प्रवाहित होगी तब सुख की चान्दिनी बरसेगी । आत्मा के इस जागरण व पहचान से सारी कालिमाएं और मलिनताएं संकट एवं विपत्तियाँ टल जायेंगी । आत्मा का यह दर्शन भारतीयों का जीवन दर्शन है । इस दर्शन में संपूर्ण मानवता अपने चेतन रूप में सत्यं शिवं तथा सुन्दरम् से विभूषित होकर उज्जवल प्रकाश को विकीर्णित करती है । यह जीवन नदी की लहर की तरह बढ़ रहा है जो कभी पीछे लौटना नहीं जानती । आगे बढ़कर सुख के तट को चूमना ही जिसका काम है ।

उन का जीवन दर्शन आशावादी है । उस में कहीं किसी ओर से भी निराशा नहीं । संदेश देने की क्षमता उसी साहित्यकार में निहित रहती है जो आशावादी हो, जिसका विश्वास मानवता की प्रगतिशीलता तथा महानता के प्रति अटल हो । इसी दृष्टिकोण के कारण जीवन के महत्व को गतिशीलता तथा कर्मण्यता भी मानते हैं । जीवन में विषम परिस्थितियाँ सब पर आती हैं । लेकिन उन से घबड़ाकर हार मानना कर्मण्य का काम नहीं । डा. वर्मा का विश्वास गिरने में नहीं, गिर कर उठने में है । वे बचपन में बड़े पहलवान थे । अखाड़े में वे कभी चित नहीं हुए थे । हां, कुश्ती कभी कभी बराबरी में छूट जाती थी । उन की यह बाल मनोवृत्ति बड़े होने के उपरान्त भी वैसे ही बनी रही कि वे किसी के सामने चित्त नहीं हुए । भले ही विषम परिस्थितियों के मध्य से उन को गुजरना पड़े, किन्तु वे कभी हार नहीं मानते । विजय को वरणीय समझकर उसी की प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील रहते हैं । अंकुर ऊपर ही उठता है, कभी नीचे नहीं जाता । उस के उठने की आवश्यक स्थितियों के न रहने पर भी वह पृथ्वी से रस ग्रहण करता है । मनुष्य की अंतरात्मा सदैव जीवित रहती है । मानवता का सच्चि गतिशीलता के साथ अग्रसर होने में है । मानवता के प्रतिनिधि लेखक पराजय की वाणी से लोगों को संदेश नहीं देता ।

" जीवन की प्रगतिशीलता का तात्पर्य यही है कि वह रोकने और दबानेवाली चीजों से उभर कर और भी वेग से बहना प्रारंभ कर दें । जिस तरह पानी की धारा के सामने एक पथ्थर आ जाता है और पानी दायें - बायें होकर निकलता है या अपने वेग से पथ्थर के ऊपर में बहकर निकलने लगता है उसी तरह जीवन भी विपत्तियों के ऊपर से होकर बहने लगे । पथ्थर की ठोकर से जिस तरह पानी दूध की तरह सफेद होकर शब्द करता हुआ बहने लगता है, इसी तरह

विपत्तियों से जीवन को और भी निखरना चाहिए। उस से ध्वनि निकलनी चाहिए कि मुझे पत्थर की चोट लगी है पर मैं उसे पार कर बह रहा हूं। तभी जीवन की सार्थकता है और ऐसा जीवन ही आगे बढ़कर संसार को सींचता हुआ प्रकृति और सृष्टि के सागर में मिलता है।"(0)

भारतीय जीवन दर्शन का नियति के प्रति अटल विश्वास का रहना भी प्रधान तत्व है। इस नियति के रूप में चाहे चिन्तकों के मत में विभिन्नता हो, पर सभी चिन्तक इस को स्वीकार करते हैं। आधुनिक विचारकों में से कई भाग्यवाद के प्रति अपनी असम्मति प्रकट करते हैं। लेकिन भाग्यवाद का वह आदर्श रूप भी है जो निष्कर्मण्यता का घोर विरोध कर मनुष्य को प्रगति के पथ पर अग्रसर करने की क्षमता प्रदान करता है। विपत्तियों के बीच में से धैर्य और साहस के साथ पथ निकालने की प्रेरणा देता है। आकस्मिक घटना या संयोग का अच्छा परिणाम निकल सकता है या कभी बुरा भी हो सकता है। अच्छे व बुरे परिणामों के परे मनुष्य की दृढ़ आस्था की स्थिति रहे -- यही इस दर्शन में भाग्यवाद व साहस का आदर्श रूप है। डा. रामकुमार वर्मा के जीवन दर्शन में इस पक्ष के भी दर्शन होते हैं। जैसे पहले ही कहा जा चुका है, उन के दृष्टिकोण के निर्मित होने में भारतीय चिंतकों के निर्धारित गंभीर तथ्य सहायक हुए हैं। अतः वे शक्ति और पुरुषार्थ में पूरा विश्वास रखते हुए भी भाग्य में आस्था मानते हैं। उन के अनुसार इस तरह की आस्था के होने पर जीवन में एक संतोष उदय होता है। वे प्रश्न करते हैं कि मनोवैज्ञानिक रूप से यही क्या कम बात है कि सारी शक्ति लगाकर असफल होने पर निराशा का जहर हृदय में नहीं फैलता। इस में कितनी ही सच्चाई भरी हुई है। असफल होने पर एक गहरी सांस लेकर यह अनुभव करना है कि मेरे भाग्य में यही होना था और वही हुआ। इस तरह के अनुभव से शक्ति कुण्ठित नहीं होती। द्विगुणित शक्ति का संचय होता है। डा वर्मा कर्मण्यता के पुजारी हैं। भाग्यवाद के प्रति आस्था रखने का तात्पर्य यह कदापि नहीं कि मनुष्य भाग्य के भरोसे निष्क्रिय बने रहे और फल की प्रतीक्षा करे। भाग्यवाद कर्म के पथ का रोड़ा नहीं, वह कर्म चक्र की धुरी में और शक्ति पहुंचाने का काम करता है। गीताकार के निम्नलिखित श्लोक के अनुसार मनुष्य को कर्म में प्रवृत्त होना चाहिए।

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन,
मा कर्म फल हेतु भूर्मा ते संगोस्त्वकर्मणि ॥

---

(0) डा. रामकुमार वर्मा विचार दर्शन पृ. ५६ - ६०

डा. वर्मा चाहते हैं कि आकस्मिक घटनाओं से मनुष्य पूरा लाभ उठावे। वे आकस्मिक घटनाओं या संयोग को इतना स्वाभाविक तथा सहज समझते हैं कि जैसे वर्षा के बीच में बिना कोई सूचना दिए हुए सूरज की किरण निकल आए और उस से एक सुन्दर रंगों की कविता लिए हुए इन्द्रधनुष खिल जाए।

प्रकृति में भी जीवन के इन्हीं आदर्शों के दर्शन डा. वर्मा को हुए हैं। प्रकृति के हर एक तत्व का विकास होता रहता है। उस में गतिशीलता के दर्शन हर क्षण होते रहते है। अपनी शक्ति से हर एक तत्व महान बना रहता है। इन से मनुष्य अपना-पथ निर्धारित कर सकता है। केवल उन से शिक्षा ग्रहण करने की क्षमता आवश्यक है। डा. वर्मा विकसित फूलों की शोभा का आनंद उठाते हैं, झरनों के कलकल निनाद का श्रवण करते हैं। अुन्नत पर्वतों को गर्व से युक्त होकर आसमान का आलिंगन करना देखते हैं। इन से वे अनुप्राणित होते हैं। उन्हीं के शब्दों में उनका दर्शन इस प्रकार है -------- मैं देखता हूं कि मेरे चारों ओर फूल खिल रहे हैं, झरने बहते चले जा रहे हैं और पहाड़ अपना माथा उठाकर मौन भाषा में कह रहे हैं कि हमारे हृदय में गुफाओं के गहरे घाव हैं, किन्तु हम खड़े हो कर आकाश से बातें कर रहे हैं। सौन्दर्य साहस और शक्ति के ये अद्भुत मेरा पथ - प्रदर्शन कर रहे हैं, मुझे मेरे जीवन का रास्ता दिखला रहे है। फिर मेरा जीवन फूल की तरह खिला हुआ, निर्झर की तरह प्रगतिशील और पहाड़ की तरह महान होने से कैसे रुकेगा ? उन के इस वक्तव्य में उनका अपार विश्वास, अटल आस्था तथा ईमानदारी प्रकट हुए हैं। उपर्युक्त जीवन दर्शन से उन की रचनाओं में एक ऐसी अकुंठित शक्ति भरी रहती है कि जीवन के इस दृष्टिकोण के कारण उन के एकांकियों में नैतिक आदर्श की प्रतिष्ठा की गई है। उन के एकांकियों में जीवन की अभिव्यक्ति तीन प्रकार से हुई है। १. भारतीय संस्कृति की व्याख्या २. इतिहास और राष्ट्रीयता के प्रति आस्था ३. दैनिक सामाजिक समस्याओं का हल। इन तीनों प्रकारों में जीवन दर्शन का एक ही सूत्र आद्योपान्त दृष्टिगोचर होता है।

हमारी संस्कृति की व्याख्या करने के लिए प्राचीन महाकवियों के काव्य और नाटक तथा उन से संबन्धित प्रसंग नये ढंग से एकांकी के रूप में रचे गये हैं। वर्माजी के " राजारानी सीता ", " भरत का भाग्य " " उत्सर्ग " और अन्धकार इस कोटि के अंतर्गत आते हैं। प्रथम दो एकांकी रामायण के प्रसंगों को कथा वस्तु के रूप में लेकर रचे गये हैं और अंतिम दो एकांकियों में अध्यात्म से संबन्धित गंभीर विषयों का प्रतिपादन किया गया है।

" राजारानी सीता " में वह प्रसंग अंकित किया गया है । जब अशोक वाटिका में पति-वियुक्ता महारानी सीता शोकमग्ना होकर अपने जीवन को समाप्त करना चाहती है तभी भगवान राम के दूत श्री हनुमान मुद्रिका लेकर वहां पहुंचता है और माता सीता को राम का कुशल समाचार देता है । महारानी सीता के राम के प्रति अटल विश्वास तथा अचंचल प्रेम की व्यंजना की गई है और उन्हीं के कारण वे शक्तिशाली, वैभव संपन्न रावण की अवहेलना करती है। सीता के जीवन में कितनी विपत्तियाँ आ घेरी है । लेकिन उस का विश्वास अचंचल है । विपत्तियों की अग्नि में जलते रहने पर भी उस के मुंह से कभी " रावण की जय " की बोल नहीं निकली । साधारण स्त्री के लिए रावण के द्वारा प्रदत्त प्रलोभ पर्याप्त है ।लेकिन सीता के सामने वे सारे०प्रलोभ व्यर्थ हुए है । जीवन में यही अटल विश्वास आवश्यक है । यही अचंचल प्रेम अपेक्षित है । यही धैर्य वांछित है । विधर्मी अत्याचारी के सम्मुख मस्तक झुकाना अविश्वासी लोगों का काम है । रावण अपनी शक्ति और वैभव संपत्ति से सीता के मन में उसी तरह आतंक उत्पन्न करना चाहता है जिस तरह उस ने अन्य लोगों के मन में उत्पन्न किया है । सीता को अपने अनुकूल बनाने के लिए वह पार्थी कथा नहीं करता । महादेव शंकर का उत्सव भी उसी के लिए करता है। लेकिन रावण को सीता धिक्कारती है ---- " चुप रह दुष्ट " क्या तुझे लज्जा नहीं आती कि मुझे एकान्त में पाकर हरण करता है और अपनी शक्ति का आडंबर मुझे दिखलाना चाहता है ? अन्यायी भी कहीं शक्तिशाली हो सकता है, पापी भी कहीं भक्त हो सकता है, कायर भी कहीं शूर वीर हो सकता है ? जिस ने अपनी सारी लज्जा खोदी है वह अपने सम्मान की बात किस मुख से कह सकता है ? " सीता का आदर्श अनुकरणीय है । डा. वर्मा इन्हीं आदर्शों के पूर्ण रूप को देखना चाहते हैं । इस० हमारी संस्कृति के पांचों प्राण इन्हीं आदर्शों में स्थित हैं । इन अनुकरणीय आदर्शों को जीवन में पूर्ण रूप प्रदान करने का प्रयत्न हम में होना चाहिए । अपनी आत्मशक्ति से अपरिचित देशवासियों के सम्मुख फिर से हमारी संस्कृति के आदर्शों को रखकर जीवन की विपत्तियों से धैर्य और साहस के साथ विश्वास और प्रेम के बल पर लड़ने का उपदेश देते हैं । " भरत का भाग्य " एकांकी की रचना के मूल में भी उन का यही उद्देश्य लक्षित होता है । भरत के चरित्र की भ्रातृ स्नेह की अटल भावना, श्रद्धा और तज्जन्य निस्पृहता और विराग की भावना , इस०पर प्रकाश डाला गया है । नवयुवकों के चरित्र के निर्मित होने में जब इस तरह के आदर्शपूर्ण व्यक्तियों के जीवन से प्रेरणा प्राप्त होती है व तब विभिन्नताओं के बीच में से समता की सृष्टि होती है । इस प्रकार पौराणिक आदर्शपूर्ण व्यक्तियों का अंकन डा. वर्मा ने किया है ।

अंधकार और उत्सर्ग आध्यात्मिक एकांकी है। अंधकार में प्रेम और वासना के सापेक्ष संबंध की चर्चा की गई है। जीवन में प्रेम आवश्यक है लेकिन प्रेम वासना के बिना हो ही नहीं सकता। उस को अनुशासित करने का परिणाम अशुभ ही होता है। धर्म जीवन के लिए विष है। धर्म से मनुष्य का जीवन अंधकार से भर उठता है। धर्म और प्रेम से विरोध है। अतः यह अंधकार रहेगा ही। इस एकांकी में केवल अंधकार की स्थिति के कारणों पर प्रकाश डाला गया है। प्रजापति के अंधकार दूर करने के प्रयत्नों के व्यर्थ होने पर भी उन के प्रयत्न श्लाघनीय हैं। बुद्धि की विभाजक रेखा से मनुष्य अपनी प्रेम संबंधी अथवा वासना संबंधी भावनाओं को संयमित कर सकता है। अंधकार के बीच में से प्रकाश की किरणों की खोज उस के द्वारा की जा सकती है। " तमसोमाज्योतिर्गमय " की भावना उस के हृदय में तभी स्पन्दन को प्राप्त करती है, जब वह चारों ओर से अन्धकार से आवृत रहता हो। अतः वासना से लिप्त प्रेम को परिशुद्ध कर ऊँचे धरातल पर अपनी हार्दिक स्थिति को पहुंचाने की साधना ही धर्म है। साधना हमेशा विष के समान कड़वी होती है। लेकिन उस के पान के उपरान्त ही अमृत की सिद्धि होती है। परोक्ष रूप से पात्रों या दर्शकों को यह एकांकी सोचने को बाध्य करता है कि प्रेम और वासना को विभाजित कर पृथक् पृथक् रूप से देखा जा सकता है। अथवा उस तरह का कर्म असंभव है? मनुष्य को द्वन्द्व भावनाओं के संघर्ष से ऊपर उठने की चेष्टा करनी पड़ती है। हमारे ऋषियों ने साधना के इस पक्ष पर विशेष बल दिया है। आत्मा की जागृति के लिए इन द्वन्द्वों का होना अनिवार्य भी समझा गया है। अग्नि में तप्त होने पर सारी मलिनताएं धुल जाती हैं। इस प्रकार इस एकांकी में डा. वर्मा का दृष्टिकोण स्पष्ट हुआ है।

व्यक्ति के विकास में समाज का विकास है। लेकिन व्यक्ति के धर्म और समाज के धर्म भिन्न भिन्न होते हैं। जीवन में कुछ ऐसे संघर्ष पूर्ण क्षण आ उपस्थित होते हैं जिन से मनुष्य को कर्तव्य के निर्णय करने में बड़ी कठिनाई होती है। कभी व्यक्तिगत धर्म को तिलांजलि देकर सामाजिक धर्म का निर्वहण करना पड़ता है तो कभी सामाजिक धर्म को त्याग कर व्यक्तिगत धर्म का पालन करना पड़ता है। डा. वर्मा समाज और व्यक्ति दोनों के सम विकास के पक्षपाती हैं। उन का यह दृष्टिकोण " उत्सर्ग " एकांकी में स्पष्ट हुआ है। " उत्सर्ग " एकांकी के महान वैज्ञानिक डाक्टर शेखर को व्यक्तिगत तथा सामाजिक दोनों कर्तव्यों का पालन करना चाहिए था, लेकिन सामाजिक कर्तव्यों को अधिक श्रेय देकर उन्होंने अपनी प्रेमिका के प्रेम को ठुकरा दिया है।

भले ही उस को अंत मे सामाजिक कर्तव्य के पालन में आत्मतुष्टि प्राप्त हुई हो पर उसका जीवन अपूर्ण ही रहा था। परिवार के मंगल मय सुखदायी वातावरण में पोषित हो कर मनुष्य की चेतना का विकास होता है। अविवाहित जीवन में चेतना के विकास का वह विशाल क्षेत्र नहीं है जो वैवाहिक जीवन मे रहता है। मानवीय संवेदनाओं का पूर्ण विकास वैवाहिक जीवन मे ही होता है। इस एकांकी मे डा. शेखर अपने वैज्ञानिक अनुसंधानों मैं नारी रुचि का तिरस्कार करते हैं और अपने दोषों को छिपाने के लिए नारी सेवा का अहं उपस्थित करते है। तो इस की सजा एकांकीकार ने उन को बड़ी से बड़ी दी है। जीवन भर के संचित विज्ञान के अनुसंधानों से उन्हें हाथ धोना पड़ा है। इस प्रकार डा. वर्मा ने प्रकृति में जीवन की समरसता उपस्थित करने का प्रयत्न किया है।

इतिहास और राष्ट्रीयता के प्रति आस्था के कारण डा वर्मा ने ऐतिहासिक एकांकियों का प्रणयन किया है। जीवन की अभिव्यक्ति उन के एकांकियो मे इस तरह हुई है कि एक ओर भारतीय संस्कृति से पुष्ट अतीत काल की झांकी प्रस्तुत की गई है। तो दूसरी ओर पुन: सांस्कृतिक निर्माण के लिए आदर्शों की प्रतिष्टा की गई है। चाहे भारत के मध्ययुगीन इतिहास और संस्कृति की पृष्टभुमि पर रचित एकांकी हो, चाहे मुगल काल के जीवन से संबन्धित एकांकी हो, इन के एकांकियों में सर्वत्र नैतिक आदर्शवाद की स्थापना की गई है। उन एकांकियों के प्रणयन का मुख्य उद्देश्य यह है कि डा. वर्मा मनुष्य को संपूर्ण अस्तित्व से युक्त बनने की प्रेरणा देना चाहते हैं। प्राचीन कालमे मानव जीवन में जो निश्चयात्मिकता विद्यमान थी, जिस के कारण वह सशक्त बना रहता था। उस का इस काल मे लोप हो गया है। आज का मानव स्वप्रेरित अथवा आत्मि प्रेरित होकर कार्य क्षेत्र मे अग्रसर नहीं हो रहा है। उस की विचार धारा बिखर गई है। संकोच, शंका, भय आदि के वशीभूत हो कर मनुष्य अपने स्थिर संकल्प की शक्ति को खो बैठा है। डा. वर्मा पुन: मनुष्य को इस योग्य बनने की प्रेरणा अपने एकांकियों के द्वारा देना चाहते हैं। उन की कामना है कि मनुष्य अपनी निश्चयात्मिका बुद्धि को पुन: प्राप्त कर ले। उन के सामाजिक समस्या संबधी एकांकियों के प्रणयन का उद्देश्य भी यही रहा है। उन के " नहीं का रहस्य " एकांकी में प्रोफेसर की संकोच प्रवृत्ति का अंकन हुआ है। उस संकोच के कारण प्रोफेसर को आजीवन अविवाहित रहना पड़ा है।

स्वावलंबी अथवा आत्म प्रेरित होने के लिए बाल्य काल के ऐसे संस्कारों की स्थापना की आवश्यकता पड़ती है जिन के बड़े होने पर व्यक्तित्व महान बन जाता है। भारत के ऐतिहासिक पुरुषों के आदर्शपूर्ण जीवन देश के नव युवकों को अनुप्राणित करने में सक्षम हैं। इसी कारण से डा. वर्मा ने शिवाजी , समुद्रगुप्त पराक्रमांक, श्री विक्रमादित्य ; कौमुदी महोत्सव, दीपदान, स्वर्ण श्री, कलंक रेखा, दुर्गावती आदि एकांकियों की रचना की है। इन सब एकांकियों के इतिवृत्तों तथा वस्तु विशेषताओं पर तीसरे परिच्छेद में विस्तार पूर्वक विचार किया गया है। यहां इतना कहना पर्याप्त है कि इन के सभी ऐतिहासिक एकांकियों में अपने देश के अतीत काल के आदर्श स्त्री-पुरुषों के महान व्यक्तित्वों की ०००६०००६०० झांकियां प्रस्तुत की गई हैं। नवयुवकों में चारित्रिक दृढ़ता को उत्पन्न कर प्राचीन भारतीय महानुभवों की भांति उन्हें तेजस्वी बनाना डा. वर्मा का अभीष्ट है। अतः उनके एकांकियों में जीवन का वह आदर्श मिलता है जिस में चारित्रिक दृढ़ता और कर्मण्यता की शिक्षा भरी रहती है।

दैनिक सामाजिक समस्याओं का हल प्रस्तुत करते समय भी डा. वर्मा के उपर्युक्त दृष्टिकोण में किसी प्रकार का अंतर नहीं आया। उन्होंने पारिवारिक जीवन की ००००००००० झांकियां अपने सामाजिक एकांकियों में प्रस्तुत की है और व्यंग्य और हास्य के माध्यम से उन की त्रुटियों की ओर संकेत करते हुए सुधार की प्रेरणा दी है। उन के 'रीढ़', 'कहां से कहां', 'रंगीन स्वप्न', 'एक अंक की बात', 'सही रास्ता', 'कवि पतंग', 'आशीर्वाद' आदि व्यंग्य प्रधान एकांकियों में सुधार की प्रवृत्ति स्पष्ट रूप से लक्षित होती है।

इस प्रकार उन के जीवन दर्शन का रूप अनेक दिशाओं में दिखाई पड़ता है। नैतिक आदर्शों ००० की प्रतिष्ठा करने की प्रवृत्ति और व्यंग्य एवं विनोद के माध्यम से सुधार की ओर इंगित करने की प्रवृत्ति डा. वर्मा में इसलिए आ गई कि वे जीवन को पुष्प की तरह पूर्ण विकसित, पर्वत के समान उन्नत और निर्झरिणी के समान गतिशील बनाना चाहते हैं। उन के इस मानवतावादी दृष्टिकोण के कारण उन की रचनाओं में शाश्वत सत्यों की प्रतिष्ठा की गई है और वे रचनाएं उसी तरह भविष्य में संदेश देती रहेंगी जिस तरह आज दे रही हैं। वे कभी पुरानी नहीं होंगी।

--- समाप्त -----